**International Journal of Advanced Educational Research**
**ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12**
**www.educationjournal.org**
**Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 19-21**

# भारत में महिला मानवाधिकारी एवं न्याय

**सुमन चौधरी**
शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, भारत

**प्रस्तावना**

मावन जाति का परम लक्ष्य एक मावनीय सभ्य समाज की रक्षा करना है। मानवता के विषय पर समाज में विभेद हो सकता है। किन्तु मौलिक मानवीय अनिवार्यता सभी प्रकार के वाद – विवाद से ऊपर रही है। समकालीन समाज में इन्हें मानवाधिकारों के रूप में जाना जाता है। मानव इतिहास साक्षी है कि प्रत्येक समाज में व्यक्ति की गरिमा तथा व्यक्ति एवं समाज के मध्य सबंधों को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। सामाजिक नैतिकता, व्यक्तिगत मूल्य, सामाजिक पदक्रम, जन्म, लिंग, शासकीय या दैवीय शक्तियाँ इन मूल्यों के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। इस प्रसंग में मानवाधिकारों की अवधारण जो कभी– कभी निजी अधिकारों पर बल देती है, समाज के साथ अन्तर्विरोध पैदा करती है लेकिन इन संदर्भ में जैसा कि मानवाधिकारों के प्रवर्तकों की धारणा है ये मूलभूत आधार है, जिन्हें व्यक्ति या समाज से अलग नहीं किया जा सकात है अर्थात् ये जन्मजात है, अपनी प्रकृति में वैश्विक है क्योंकि समस्त समाजों के लिए अनिवार्य है।

भारतीय संविधान विश्व का सबसे औचित्यपूर्ण संविधान माना जाता है। सार्वजनिक मानवाधिकार उद्घोषणा के समय ही भारतीय संविधान का दस्तावेज तैयार हुआ था और प्रस्तावना में मानवाधिकार, मौलिक अधिकार एवं राज्य के नीति–निदेशक तत्व सम्मिलित किए गए थे। जब हम हमारे संविधान के प्रारम्भ में दी गई प्रस्तावना का अध्ययन शुरू करते हैं तो प्रस्तावना के प्रारम्भ में ही ''हम भारत के लोग'' से इनकी शुरूआत होती है। इसका आशय यह है कि भारत के इस महान संविधान का निर्माण होने के पश्चात् हम भारत के सभी पुरूष एवं महिलाएं ''इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।'' इसका स्पष्ट आशय यही है कि भारत के भाग्य करने वाले इस संविधान को भारत के समस्त लोगों अर्थात् भारत के पुरूष और महिलाओं ने मिलकर अंगीकार किया है।

ज्ञातव्य है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भी कुछ–कुछ विधान महिलाओं की स्थिति के संदर्भ में महत्वपूर्ण थे तथा बंगाल सती अधिनियम 1829 हिन्दु विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1859, भारतीय दण्ड संहिता 1860, धर्म परिवर्तित विवाह समापन अधिनियम 1869, तलाक अधिनियम 1869, विवाहित महिला का सम्पत्ति अधिनियम 1874, मुख्तारनामा का अधिरिनयम अधिकार अधिनियम 1882, नागरिक प्रक्रिया संहिता 1908, कानूनी वकालत संशोधन अधिनियम 1923, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925, बाल विवाह प्रतिबंध अधिनियम 1929, बोम्बे हिन्दू द्वि–विवाह अपराध निवारण अधिनियम 1946। प्रस्तावना के साथ – साथ संविधान के भाग–3 जो मूल अधिकारों से संबंधित है के अनुच्छेद 14, 15, 16 और राज्य के नीति निदेशक सिद्धान्तों में भी महिलाओं को विशेष स्थिति प्रदान की गई है।

महिलाओं के अधिकार की अभिवृद्धि का उद्भव द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के समय से विश्व के जनसमुदाय में हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर की प्रस्तावना मानव जाति की गरिमा एवं योग्यता में मौलिक मानवाधिकारों में पुनः विश्वास पैदा करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के लोगों की अवधारणा का जो उल्लेख करते है उसका सबंध लोगों द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक समुन्नति की प्रोन्नति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय यान्त्रिकी का प्रयोग करने के लिए तथा पुरूषों तथा स्त्रियों के समान अधिकारों से होता है। इसके समान ही प्रावधानों को संयुक्त राष्ट्र के चार्टर तथा उन दूसरे मानवाधिकारों के लिखित प्रावधानों में सम्मिलित किया गया है। जो स्त्रियों के अधिकारों के संरक्षण एवं अभिवृद्धि के लिए प्रावधान करता है।

भारतीय महिलाओं की दुर्दशा से गाँधीजी बहुत दुःखी थे। उनके अनुसार महिला बुद्धि तथा योग्यता में पुरूषों से किसी प्रकार कम नहीं है। इतिहास साक्षी है कि प्राचीन भारत में जीवन के अनेक क्षेत्रों में पुरूषों से महिला आगे थी और सामाजिक जीवन मे उन्होंने अपने को ऊपर उठाया। उन्होंने कहा ''मेरे सपनों का स्वराज्य तब तक असंभव है। जब तक कि भारत की महिलाए, पुरूषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर अपनी पूर्ण भूमिका नहीं निभाती। मैने स्वराज्य को रामराज्य के रूप में परिभाषित किया है और राम राज्य की प्राप्ति तब तकनही हो सकती है। जब तक समाज में हजारों सीताएं नही हों।''

प० नेहरू ने भी स्त्री और पुरूष के बीच भेदभाव को गलत तथा अन्यायपूर्ण माना। नेहरू के अनुसार महिला को मनुष्य होने के नाते वे सभी अधिकार तथा अवसर एवं सुविधाएं प्राप्त होनी चाहिए जो कि पुरूष को प्राप्त है। नेहरू के अनुसार, ''समानता से क्या अर्थ है? समानता यह तो नहीं है कि वे हर बात में एक से हो। जाहिर है एक से नहीं है, यह हरेक जानता है एक से नहीं है, यह हरेक जानता है लेकिन समानता का अर्थ है कि महिला को हरेक मौका दिया जाये वे सब बातें करने का जो पुरूष को प्राप्त होता है और उसको अधिकार हो।

भारतीय संविधान न्याय की परम्परागत अवधारण को स्वीकार नहीं करके न्याय के आदर्श को मानवीय विकास की मूल आवश्यकताओं के संदर्भ में उद्घाटित एवं संतुलित करता है। इसी नवीन संविधान में उन समस्त प्रचलित धारणाओं एवं विचारों का कानूनन निषेध कर दिया गया है जो सामाजिक संबंधो में अमानवीय भेदभावों को बढ़ावा देते हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारतीय संविधान में एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायपालिका का प्रावधान करते हुए प्रत्येक नागरिक को सस्ता एवं समुचित न्याय दिलाने के प्रावधान किये गये हैं तथा न्यायपालिका को सामाजिक क्रान्ति का एक हथियार बनना है उस समानता के प्रति वफादार होते हुए जिसके लिए भारतीयों ने उपनिवेशीय काल में लालसा की थी तथा उसमें भी उस काल की महिलाओं की बिगड़ी दशा को सुधारने की व न्याय करने की।

भारत में न्याय, स्वतंत्रता और समानता को लिखित संविधान द्वारा प्रतिभूति दी है। भारत में सर्वोच्च न्यायालय को हमारे संविधान के सरंक्षण एवं न्यायिक प्रक्रिया के विधिक प्रयोग में महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी है। यह हमारे देश में एकता और अखण्डता की बहुत बड़ी शक्ति है। सर्वोच्च न्यायालय सुसंगठित एवं सुनिर्देशित न्यायिक ढ़ाचा है। यह कानून के वास्तविक अर्थो को व्यक्त करता है।

### महिलाओं हेतु प्रमुख न्यायिक निर्णय

भारत के संविधान में महिला मानवाधिकार के प्रति पूर्ण सम्मान व्यक्त किया गा है। भारत के संविधान में सभी व्यक्तियों को धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग तथा वर्ण के बावजूद समान माना गया है तथा सभी प्रमुख व महिलाओं को राजनीतिक, सिविल, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक अधिकार प्रदान किया गया है। इन अधिकारों को संविधान के भाग– 3 में अनुच्छेद 12–35 के अन्तर्गत मूलाधिकार शीर्षक के अन्तर्गत रखा गया है जिनका उल्लंघन कोई भी नहीं कर सकता। इन अधिकारों का उल्लघंन किये जाने पर न्यायालय में कार्यवाही की जा सकती है। संविधान द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को इन अधिकारों के रक्षक के रूप में नामित किया गया है। अनुच्छेद 32 ''संवैधानिक उपचारों का अधिकार'' नागरिकों को अपने मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन हेतु या उल्लंघन के विरूद्ध सुरक्षा के लिए सर्वोच्च न्यायालय में जाने की शक्ति प्रदान करता है। ''डॉ०'' भीमराव अम्बेडकर ने इस अधिकार को भारतीय संविधान की आत्मा कहा है।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समाज में व्यक्त महिला कुरीतियों व बुराइयों का निवारण न्यायिक प्रक्रिया के माध्यम से किया जाता है। इसी आधार पर सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों द्वारा महिलाओं के उत्थान हेतु कुछ प्रमुख न्यायिक निर्णय दिये जो निम्नलिखित हैः–

### लता सिंह बनाम उत्तरप्रदेश राज्य

इस मामले में पिटीशनर एक 27 वर्ष की नवयुवती, पिता की मृत्यु के पश्चात अपने भाई के साथ रह रही थी परन्तु उसने अपने भाई का घर छोड़ स्वेच्छा से एक व्यक्ति ब्रह्मा नन्द गुप्ता से विवाह कर लिया। भाई ने इस विवाह से नाराज होकर पुलिस में अपनी बहन के गायब होने की रिपोर्ट लिखा दी। पुलिस ने उसके पति और बहनों को गिरफ्तार कर लिया। सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त की औरयह निर्धारित किया कि पिटीशनर वयस्क थी और उसे अपनी स्वेच्छा से किसी भी व्यक्ति के साथ विवाह करने का अधिकार था तथा पुलिस प्रशासन को यह निर्देश दिया कि उसे परेशान न करे तथा उसे पूर्ण सुरक्षा प्रदान करे। यह अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत प्रदत्त उसकी वैयक्तिक स्वतंत्रता का अधिकार है जिसका उल्लंघन कोई नहीं कर सकता है।

### दिल्ली डोमेटिस्क वर्किंग विमेन्स फोरम बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया

सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले में महिलाओं के साथ बढ़ते हुए यौन अपराधों के प्रति गम्भीर चिन्ता व्यक्त की। प्रस्तुत मामले में दिल्ली श्रमजीवी फोरम ने लोकहित वाद के माध्यम से चार घरेलू श्रमजीवी महिलाओं के साथ सात सेना के जवानों द्वारा यौन उत्पीड़न की घटना को न्यायालय के तीन न्यायमूर्तियों की खण्डपीठ ने ऐसी महिलाओं को प्रतिकर प्रदान करने तथा उनके पुनर्वास के लिए निर्देश दिये।

### सी०बी० भुथम्मा बनाम भारत संघ

इस मामले में नियम के अधीन विवाहित महिला कर्मचारी को उच्च पदों पर प्रोन्नत न किये जाने का प्रावधान था। पिटीशनर को भारतीय विदेश सेवा ग्रेड–1 के पद र प्रोन्नति नहीं दी गई क्योंकि वह एक विवाहित महिला थी। न्यायालय ने उक्त नियम को विभेदकारी बताते हुए असंवैधानिक घोषित कर दिया।

### विशाखा बनाम राजस्थान राज्य

प्रस्तुत मामले में सर्वोच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने श्रमजीवी महिलाओं के प्रति काम के स्थान में होने वाले यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए जब तक कि इस प्रयोजन के लिए विधान नहीं बन जाता है, विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किया है। न्यायालय ने यह कहा कि देश की वर्तमान सिविल विधियां या आपराधिक विधियां काम के स्थान पर महिलाओं के यौन शोषण से बचने के लिए पर्याप्त संरक्षण प्रदान नहीं करती है और इसके लिए विधि बनाने में काफी समय लगेगा, अतः जब तक विधान मण्डल समुचित विधि नहीं बनाता है न्यायालय द्वारा विहित मार्गदर्शक सिद्धान्त को लागू किया जायेगा। इस मामले में महिलाओं के अनुच्छेद 14, 19 और 21 में प्रदत्त मूल अधिकारों को लागू कराने के लिए विशाखा नाम की एक गैर सरकारी संस्था ने लोकहितवाद में फाईल किया था। याचिका फाइल करने का तत्कालीन कारण राजस्थान राज्य में एक सामाजिक महिला कार्यकर्ता के साथ सामूहिक बलात्कार की घटना थी।

### सरला मुगल बनाम भारत संघ

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक ऐतिहासिक महत्व के निर्णय सरल मुद्गल बनाम भारत संघ में प्रधनमंत्री से यह निवेदन किया कि वे संविधान के अनुच्छेद 44 पर नया दृष्टिकोण अपनाएं जिसमें सभी नागरिकों के लिए एक 'समान सिविल संहिता' के बनाने का निर्देश दिया गया है और कहा गया है कि ऐसा करना पीड़ित व्यक्ति की रक्षा तथा राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता की अभिवृद्धि दोनों दृष्टि से आवश्यक है। मामले में अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत चार पिटीशन फाइल की गई। इन सभी में पति ने अपनी पत्नी को छोड़कर इस्लाम धर्म ग्रहण करके दूसरी शादी की बात सामने आई थी।

इन परिस्थितियों में न्यायमूर्ति श्री कुलदीप सिंह तथा श्री आर.एस. सहाय ने यह निर्णय दिया कि एक हिन्दू पति का अपना पहला विवाह विच्छेद किए बिना इस्लाम धर्म स्वीकार करके दूसरा विवाह हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के उपबंधों के अधीन अवैध है और पति बहु विवाह के अपराध के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 494 के अधीन दण्डनीय भी है।

भारतीय संविधान द्वारा न्यायपालिका को प्रदान की गई शक्ति के आधार पर महिलाओं की स्थिति व दशा में सुधार हुआ है। भारतीय संवधिान तथा विधि द्वारा महिलाओं को पुरूषों के समान सभी अधिकार प्रदान किय गये है तथापि भारतीय समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवस्था में एक बात स्पष्ट दिखाई देती है कि आज भी महिलाओं की वैधानिक स्थिति भ्रामक है। समान नागरिक संहिता का आदर्श राज्य के नीति निदेशक तत्वों कमो स्थापित करना था। ये नीति निदेशक तत्व सरकार के लिए निर्देशक थे लेकिन इनके लिए किसी भी न्यायालय ने इनको लागू करने के समर्थन में विचार दिये है। एक समान नागरिक संहिता की मांग लोगों द्वारा उठी है और धर्म के नाम पर महिला पर अत्याचार और शोषण से संबंधित भी है। ये विशेष रूप से महिलाओं के स्तर से जुड़ी हुई है।

### निष्कर्ष

संविधान में समानता शब्द का अवश्य समावेश हो गया है किन्तु अभी व्यवहार में समानता नहीं आई है। अनेकानेक विधियों एवं अधिनियमो के बावजूद भारतीय समाज में महिला शिक्षा एवं कानूनी शिक्षा का स्तर बहुत कम है और ग्रामीण दशाओं में तो निम्नतर है। ऐसी स्थिति में महिलाओं को अपने संवैधानिक और कानूनी अधिकारों का ज्ञान नहीं है। अभी तक महिला अधिकारों की बात को बहुत सीमित दायरे में देखा गया है। महिलाओं के लिये नये कानूनों का निर्माण उतना आवश्यक नहीं है जितना पहले से बने हुए कानूनों को व्यवहार में लाना। इसका तात्पर्य यह है कि नये कानूनों के साथ पूर्व बने हुये कानूनों में आवश्यकतानुसा संधोधन करना भी आवश्यक है। संविधान एवं कानूनों की भावना को न्याय

परिसर की वस्तु ही नहीं जन–जन की चेतना का आधार बनाया जाना आवश्यक है।

## सन्दर्भ सूची


1. मानवाधिकार मैनुअल, विदेश एवं व्यापार विभाग, आस्ट्रेलिया गवर्नमेन्ट पब्लिकेशन्स सर्विस, केनबेरा, 1990 पृ. 10
2. प्रकाश नारायण नाटाणी, महिला संरक्षण एवं न्याय, बुक एनक्लेक, जयपुर, 2007 पृ. 35
3. राजकुमार, एनसाइक्लोपीडिया ऑफ विमैन एण्ड डवलपमेन्ट सीरिज, विमैन एण्ड नेशन, अनमोल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2000, पृ. 10–12
4. द हिन्दू, 23 मार्च 1925
5. रामनारायण चौधरी, नेहरूजी अपनी ही भाषा में, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबा, 1962, पृ. 207 पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 1972, पृ. 106
6. वी.आर. के अय्यर, ला एंड द प्यूपिल, सेंइल ला पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 1972, पृ. 106
7. पी.सी. मेहता एवं एस.एस. जसवाल, बाल श्रम और कानून, मिथक और यथार्थ कल्याण का कार्य, दीप एण्ड दीप प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 80
8. विकास सिह, भारत का संविधान एक समस्त अध्ययन आशीर्वाद पब्लिकेशन, जयपुर, 2014, पृ. 70
9. लता सिंह बनाम उत्तरप्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 2006, एस.सी. 2522
10. दिल्ली डोमेस्टिक वर्किंग विमेन्स फोरम बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया, ए. आई. आर. 1995, एस.सी. 608
11. सी.वी. मुथम्मा बनाम भारत संघ, ए आई आर 1974, एस.सी. 1868
12. विशाखा बनाम राजस्थान राज्यत्र ए.आई.आर. 1997, एस.सी. 3011
13. सरला मुदगल बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 1995 एस सी 635
14. राम आहुजा, राइट्स ऑफ विमैनः ए फैमिनिस्ट पर्सपेक्टिव, रावंत पब्लिकेशन्स दिल्ली, 1992, पृ.28